मिस्र की बेटी

ज़ैनब ग़ज़ाली

मरजान उसमानी

विषय सूची

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।'

दो शब्द

मिस्र अपनी पुरानी तहज़ीबो-तमद्दुन और ज़बानो-मज़हब के एतिबार से एक ऐसा मुल्क है जो तारीख़ी तौर से अहम है। सन् 3200 ई॰ पूर्व तक यहाँ फ़िरऔन के ख़ानदान का राज रहा और 700 साल तक इसपर रूमियों का क़ब्ज़ा रहा। अफ़्रीक़ी महाद्वीप का यह वही मुल्क है जहाँ फ़िरऔन के लिए हज़रत मूसा (अलैहि॰) भेजे गए। इसी के बारे में अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया था, "निकट भविष्य में उसपर तुम्हें फ़तूह नसीब होगी तो तुम उसके वासियों के साथ अच्छा सुलूक करना।" यहीं के क़िब्ती नस्ल के बादशाह 'मुक़ौक़स' को पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) ने इस्लाम की दावत के लिए एक ख़ास ख़त भेजा था। दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर (रज़ि॰) के ज़माने में पैग़म्बर (सल्ल॰) के सहाबी हज़रत अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) के हाथों उसपर जीत हासिल हुई और मक़ौक़स की बेटी अरमानूसा इस्लामी सेना के क़ब्ज़े में आ गई, लेकिन हज़रत अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) को जैसे ही इसका पता चला उन्होंने तुरन्त उसे इज़्ज़त व एहतिराम के साथ वापस भेज दिया। वह नील नदी यहीं पर है जिसके नाम दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर-बिन-ख़त्ताब (रज़ि॰) ने ख़त भेजा। इसी मुल्क से प्यारे नबी (सल्ल॰) के लिए हज़रत मारिया क़िब्तिया भेजी गईं, हज़रत हाजिरा क़िब्तिया का ताल्लुक़ भी इसी मुल्क से था, जो हज़रत इसमाईल (अलैहि॰) की माँ और हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) की बीवी थीं। यही वह मुल्क है जहाँ से बनी-इसराईल को फ़िरऔन से नजात पाने के लिए कूच करने का हुक्म मिला। इसी मुल्क के फ़िरऔन को अल्लाह ने समुद्र में डुबा दिया, लेकिन लोगों की इबरत के लिए उसकी लाश को बाक़ी रहने दिया। यह वही मुल्क है जहाँ फ़ातिमी ख़ानदान के लोगों ने राज किया और फिर सलाहुद्दीन अय्यूबी ने बैतुल-मक़दिस पर

फ़तूह हासिल करने से पहले उनको शिकस्त दी। यही वह मुल्क है जहाँ लगातार सहाबा पहुँचे और उसको इस्लामी रंग में ढाला। यह वही मिस्र है जहाँ हसनुल-बन्ना ने इख़वानुल- मुस्लिमून की बुनियाद रखी, जहाँ हज़ारों विचारक, साहित्यकार, कवि, सुधारक, लेखक, मार्गदर्शन करनेवाले, उलमा और दरवेश पैदा हुए। यहीं इस्लामी दुनिया की हज़ार साल पुरानी यूनीवर्सिटी जामिआ अज़हर भी है। मोहतरमा ज़ैनब ग़ज़ाली का ताल्लुक़ भी इसी मुल्क से था, जिनके मुख़्तसर हालात अगले पेजों में बयान किए जा रहे हैं।

मैंने यह किताब इसलिए संकलित की है ताकि इस्लामी तहरीक से ताल्लुक़ रखनेवाली बहनों के साथ-साथ मुस्लिम उम्मत की बेटियाँ भी मोहतरमा ज़ैनब ग़ज़ाली की ज़िन्दगी, उनकी इस्लाम की तरफ़ दावत देने की जिद्दोजुहद और क़ुरबानियों से हौसला हासिल कर सकें। उनकी शख़्सियत के अनेक पहलू हैं—वे एक तरफ़ एक इबादत करनेवाली, परहेज़गार, शरीअत की पाबन्दी करनेवाली महिला हैं तो दूसरी ओर इस्लाम की ओर बुलानेवाली और प्रचारक भी हैं। एक तरफ़ वे बहुत अच्छी तक़रीर करनेवाली हैं तो दूसरी तरफ़ जानी-मानी समाज-सेविका और यतीम बच्चियों, बेसहारा औरतों की हमदर्द और उनके दुखों में उनका साथ देनेवाली हैं। वे औरतों को मस्जिदों से जोड़नेवाली रहबर हैं तो दीन के प्रचार-प्रसार के लिए उन्हें आगे बढ़कर काम करने के लिए उभारनेवाली भी हैं। वे अगर जिहाद के मैदान में खड़ी नज़र आती हैं तो इस्लाम के उलमा से इस्लाम की तालीम हासिल करते हुए भी दिखाई पड़ती हैं। वे औरतों का सुधार और तरबियत के लिए बेचैन रहनेवाली हैं तो उनके घरों को दीन के चौतरफ़ा नूर से रौशन करनेवाली भी हैं।

इस्लाम की दावत, प्रचार-प्रसार, तरबियत और तज़किया और इस्लाम को ग़ालिब करने के लिए उन्होंने सारी ताक़त ख़र्च की, यहाँ तक कि अपने मालिक से जा मिलीं। अल्लाह जन्नत में उनके दर्जे बुलन्द करे और हमें तौफ़ीक़ (सौभाग्य) दे कि हम उनकी सेवाओं, अनुभव और विचारों से फ़ायदा उठा सकें। आमीन!

23-3-2016 **—मरजान उसमानी**

पैदाइश

ज़ैनब ग़ज़ाली जबीली की पैदाइश 2 जनवरी 1917 ई॰ को क़ाहिरा के उत्तर में दक़हला ज़िले के एक गाँव में हुई। उनके वालिद के ख़ानदान का सिलसिला हज़रत उमर-बिन-ख़त्ताब (रज़ि॰) और उनकी माँ के ख़ानदान का सिलसिला हज़रत हसन-बिन-अली (रज़ि॰) के ख़ानदान से मिलता है। उनके दादा रूई के व्यापारी और बाप जामिआ अज़हर के आलिमों में से एक थे। जब वे एक साल की थीं तब उनके बाप ने ख़ाब में देखा कि वे उनको गोद में उठाए हुए मिट्टी, कीचड़, पानीवाले रास्ते से गुज़र रहे हैं कि अचानक वे हाथ से छूट गईं। उनके पिता घबरा गए और इससे पहले कि वे ज़ैनब ग़ज़ाली को मिट्टी, कीचड़ और गन्दे पानी से उठाते, सफ़ेद कपड़े में लिपटी हुई ज़ैनब को अचानक दो हाथों ने उठा लिया और उठानेवाले ने कहा, "डरो नहीं, मैं ज़ैनब का पूर्वज उमर-बिन-ख़त्ताब हूँ।" इस ख़ाब से बाप का अपनी मासूम बेटी के साथ ताल्लुक़ और गहरा हो गया।

तरबियत

ज़ैनब ग़ज़ाली के बाप की दीनी तरबियत ने उनपर गहरा असर डाला। एक अमल करनेवाले आलिम की हैसियत से वे बेटी की इस्लामी तरबियत पर पूरी तवज्जोह देते थे। इसी लिए बरकत के लिए वे अपनी बेटी ज़ैनब को एक महान सहाबिया हज़रत नसीबा-बिन्ते-काब माज़िनी अनसारी के नाम पर नसीबा कहकर पुकारा करते थे। हज़रत नसीबा (रज़ि॰) वही सहाबिया हैं जिन्होंने उहुद की जंग में तलवार के 12 ज़ख़्म खाए, लेकिन सबसे कठिन घड़ी में पैग़म्बर (सल्ल॰) के साथ अपना क़दम जमाए रहीं। ज़ैनब के बाप अपनी बेटी को इस्लामी साँचे में ढालने और इस्लामी सोच बनाने की तरफ़ पूरी तरह तवज्जोह देते रहे। बचपन में ज़ैनब के बाप फ़ज्र की नमाज़ के लिए जब मस्जिद जाते तो उनको अपने साथ ले जाते। इससे उनके दिल में मस्जिद की अज़मत (महानता) और मुहब्बत पैदा हुई। उनके बाप के मन में यह बात बैठ गई थी कि यह बच्ची दूसरी बच्चियों की तरह नहीं है, बल्कि इसका अस्ल काम उम्मत को जगाना है।

तालीम

दस साल की उम्र में जब ज़ैनब के बाप का इन्तिक़ाल हो गया तो वे अपनी माँ और भाइयों के साथ क़ाहिरा चली गईं। उनके बड़े भाई मुहम्मद अली उनकी पढ़ाई के हक़ में नहीं थे। हालाँकि वे तालीम हासिल करने का बहुत ज़्यादा शौक़ रखती थीं। उनके बड़े भाई अपनी माँ से कहा करते कि ज़ैनब को अब्बाजान ने साहस और सच बोलने की तालीम दी है, क्या आप इसकी आवाज़ और अक्ल से अन्दाज़ा नहीं लगातीं? इसने गाँव में जितना पढ़ लिया है बस उतना इसके लिए काफ़ी है। उनकी माँ का भी यही ख़याल था कि ज़ैनब को अपने बड़े भाई की बात माननी चाहिए क्योंकि वे उसके बाप समान हैं। लेकिन उनके दूसरे भाई उनकी पढ़ाई के हक़ में थे। वे उनके लिए किताबें ख़रीद-ख़रीदकर लाया करते थे।

पढ़ाई और स्कूल की तलाश में एक दिन ज़ैनब अपने घर से अकेले निकल खड़ी हुईं और शबरा मोहल्ले में पहुँच गईं, वे बहुत-सी सड़कों पर चलती रहीं। अचानक उनकी नज़र लड़कियों के स्कूल के बोर्ड पर पड़ी। तुरन्त ही उन्होंने बिना किसी हिचकिचाहट के उसका दरवाज़ा खटखटा दिया। जब चपरासी ने आने का मक़सद पूछा तो उन्होंने जवाब दिया, "मैं स्कूल के डायरेक्टर से मिलना चाहती हूँ, मेरा नाम ज़ैनब है। मैं नसीबा के नाम से जानी जाती हूँ।" उनकी गरजदार आवाज़ सुनकर चपरासी हैरान हो गया। उसने तुरन्त उनको डायरेक्टर तक पहुँचा दिया। वे जब डायरेक्टर के कमरे में दाख़िल हुईं तो रौबदार आवाज़ में बोलीं, "अस्सलामु-अलैकुम, मैं ज़ैनब ग़ज़ाली हूँ, मेरा लक़ब नसीबा है।" स्कूल के डायरेक्टर ने हैरान होकर उनकी तरफ़ देखा और पूछा, "आप क्या चाहती हैं?" उन्होंने अपना पूरा मामला उनके सामने रखा और आगे पढ़ाई करने का शौक़, बड़े भाई की मुख़ालफ़त, बाप और परिवार के हालात तफ़सील से बताए। उनके बात करने के अन्दाज़ से स्कूल के डायरेक्टर बहुत मुतास्सिर हुए और उनकी ज़िहानत और सलाहियत को भाँप गए। उन्होंने उनसे कहा कि वे अपने उस भाई को बुलाकर लाएँ जो उनकी पढ़ाई के हक़ में है, ताकि स्कूल में दाख़िले की कार्रवाई हो सके। फिर उन्होंने उनका बाक़ायदा तरीक़े से दाख़िला-टेस्ट

लिया, जिसमें वे पूरे एतिमाद के साथ कामयाब हुईं। उनका दाख़िला पहली क्लास में हुआ, लेकिन वे दो महीने बाद ही दूसरी क्लास में प्रोमोट हो गईं।

सरकारी स्कूल में पढ़ाई करने के बाद उन्होंने जामिआ अज़हर के बड़े उलमा से, जिनमें शेख़ अब्दुल-मजीद लिल्बान, शेख़ मुहम्मद सुलैमान नज्जार और शेख़ अली महफ़ूज़ क़ाबिले-ज़िक्र हैं, से दीन की तालीम ख़ास तौर से क़ुरआन की तफ़सीर और फ़िक्ह की तालीम हासिल की। इस तरह उन्होंने दीनी और दुनियावी दोनों तरह के इल्म हासिल किए और दोनों तरह के तालीमी इदारों से तालीम हासिल की।

बचपन में उन्होंने मिस्र की मशहूर अदीबा आयशा तैमूरिया की तहरीक से फ़ायदा उठाया और हुदा शेरावी की लीडरशिप में सरगर्म औरतों की एक अंजुमन (संगठन) अल-इत्तिहादुन्निसाई से क़रीब हुईं। हुदा शेरावी मिस्र की वही औरत हैं जिन्होंने हिजाब के बिना सन् 1919 में अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ मिस्र में इन्क़िलाबी मुज़ाहरों की क़ियादत की। वे मिस्र की पहली ऐसी औरत हैं जिन्होंने सियासी स्तर पर इन्क़िलाबी तहरीक चलाने के लिए पर्दे को छोड़ दिया था और अपनी अंजुमन के बैनर तले महिलाओं की बड़ी-बड़ी कान्फ्रेंसें आयोजित करती थी। हुदा शेअरावी से ताल्लुक़ रखने के बाद ज़ैनब उस अंजुमन की एक अहम मेम्बर बन गईं। उसी ज़माने में औरतों के अधिकारों से सम्बन्धित अज़हर के उलमा से उनकी बहसें भी हुईं, क्योंकि इस अंजुमन की सरगरमियों में औरत की आज़ादी का रुझान साफ़ दिखाई देता था, लेकिन ज़ैनब औरतों की आज़ादी के बारे में जब भी बात करतीं तो उनकी विचारधारा यही होती कि यह आज़ादी इस्लामी दायरे के अन्दर और दीन की सीमाओं में रहनी चाहिए। ज़ैनब ग़ज़ाली के इसी ख़याल की वजह से जामिआ अहज़र के आलिमों ने यह महसूस किया कि इस जोशीली और साहसी वक्ता महिला से बात की जानी चाहिए और इसे मुत्मइन करना चाहिए। इसी लिए अज़हर के उलमा ने बहस में आनेवाले उन सभी बिन्दुओं पर उनको विस्तृत जानकारियाँ दीं और उनसे बातचीत की। यहाँ तक कि उनपर हक़ीक़त ज़ाहिर हो गई। जब संगठन अल-इत्तिहादुन्निसाई के ख़यालों को बयान करने की वजह से मस्जिदों में ज़ैनब ग़ज़ाली की तक़रीरों पर

अज़हर के कुछ उलमा ने पाबन्दी लगाने की माँग की तो शेख़ सुलैमान नज्जार ने (जो अज़हर के एक बड़े आलिम और औरतों में नसीहत करने के कामों के निगराँ भी थे) इस माँग को रद्द कर दिया और ख़ुद ज़ैनब ग़ज़ाली से मुलाक़ात करके अपनी गम्भीर बातों और दलीलों के ज़रिए से उन्हें मुत्मईन किया। चुनाँचे कुछ समय बाद जब वे इस्लामी ख़यालों और तर्कों से बाख़बर होकर मुत्मइन हो गईं तो औरतों के संगठन से अलग हो गईं। हुदा शेरावी के संगठन से ज़ैनब ग़ज़ाली के अलग होने की एक वजह इस संगठन का लादीनियत और आज़ाद ख़याली की तरफ़ झुकाव था और दूसरी वजह संगठन में बेपर्दा महिलाओं की अधिकता थी। हालाँकि हुदा शेरावी बज़ाहिर अपने-आपमें एक दीनदार और लायक़ औरत थी। उसने ज़ैनब ग़ज़ाली से बड़ी उम्मीदें लगा रखी थीं।

ज़ैनब ग़ज़ाली ने जब जूनियर हाई स्कूल तक पढ़ाई पूरी कर ली तो एक दिन उनको अख़बार से पता चला कि महिला संगठन तीन छात्राओं का एक वफ़्द आगे की तालीम हासिल करने के लिए फ़्रांस भेजना चाहता है। चुनाँचे वे महिला संगठन के दफ़्तर पहुँचीं और हुदा शेरावी से मुलाक़ात की, जिसने उनको फ़ौरन अपने संगठन का मेम्बर बना लिया। यह संगठन उस समय मिस्र के समाज से महिला अधिकारों की माँग बहुत ज़ोरदार अन्दाज़ से कर रहा था। चूँकि ज़ैनब ग़ज़ाली को अपने बाप की तरफ़ से तक़रीर करने की ख़ास सलाहियत, आवाज़ और अन्दाज़ हासिल हुआ था इसलिए उनकी छवि महिला संगठन में जल्द ही उभर आई, यहाँ तक कि हुदा शेरावी उनको अपना जाँनशीन समझने लगीं। बहरहाल, ज़ैनब ग़ज़ाली ने अख़बार में अपना नाम फ़्राँस जानेवाली मिस्र की छात्राओं की तीन सदस्यीय सूची में देखा। एलान के एक महीने बाद वफ़्द के सफ़र की तारीख़ भी तय हो गई, लेकिन रवाना होने से कुछ दिन पहले एक रात उन्होंने ख़ाब में अपने गुज़रे हुए बाप को देखा, जो कह रहे हैं, "ज़ैनब! तुम्हारी जगह वह नहीं है जहाँ तुम जाना चाहती हो। तुम्हारा मैदान कुछ और है, इसलिए तुम इस सफ़र के इरादे को छोड़ दो।" यह बात ख़ाब में उनके बाप ने बहुत वाज़ेह तौर पर कही। सवेरा होते ही वे हुदा शेरावी के पास पहुँच गईं और उससे कहा कि अब मैं फ़्राँस नहीं जा सकती। उन्होंने अपना ख़ाब भी सुनाया। हुदा

शेरावी ने उनकी बातें सुनकर अपना सिर पीट लिया और कहा कि बहन! ख़्वाब तो सच्चा भी होता है और झूठा भी, तुम ऐसा फ़ैसला मत करो। यह कहते हुए हुदा शेरावी उनसे लिपटकर रोने लगी, लेकिन ज़ैनब ग़ज़ाली ने दोटूक शब्दों में कह दिया कि मैं अपने बाप के हुक्म के ख़िलाफ़ नहीं जा सकती।

एक हादिसा

रात-दिन गुज़रते रहे। एक दिन अपने घर की रसोई में उन्होंने जैसे ही चूल्हा जलाया, अचानक गैस का सिलिण्डर फट गया। आग की भड़कती लपटों ने उनके कपड़े, चेहरे और शरीर सबको अपनी लपेट में ले लिया। इस आगज़नी ने उनके शरीर को बहुत घायल किया। यहाँ तक कि उनकी ज़िन्दगी ख़तरे में पड़ गई और वे मौत के क़रीब पहुँच गईं। रोज़ डॉक्टर उनके घर आते, उनके घाव पर मरहम लगाते और पट्टियाँ बाँधते। अन्त में एक बार डॉक्टर भी मायूस हो गए और उन्होंने उनके घरवालों को ख़बर दी कि इनकी हालत अब नहीं सम्भल सकती, अब दुनिया में इनके गिनती के दिन बचे हैं। अब इनके लिए सिर्फ़ दुआ कीजिए। डॉक्टर की यह बात हालाँकि किसी ने ज़ैनब को नहीं बताई, लेकिन उन्होंने ख़ुद ही सुन ली। उन्होंने तयम्मुम करके ज़्यादा-से-ज़्यादा अल्लाह को याद करना और अल्लाह से माफ़ी माँगना शुरू कर दिया। उन्होंने अपने पूरे वुजूद के साथ अल्लाह की तरफ़ रुख़ किया। इसी हालत में उन्होंने अल्लाह से वादा किया कि अगर उन्हें बीमारी से नजात मिल गई तो वे औरतों के इस संगठन को छोड़कर मुस्लिम औरतों के लिए एक अलग दीनी तंज़ीम (संगठन) क़ायम करेंगी, जो इस्लाम की तबलीग़ और प्रचार-प्रसार के लिए और इसकी सरबुलन्दी के लिए काम करेगी। अल्लाह की शान ऐसी हुई कि उनकी मरहम-पट्टी करनेवाला माहिर ईसाई डॉक्टर, जो क़िब्ती अस्पताल से आया करता था, और उनके परिवार का घरेलू डॉक्टर था, एक दिन अचानक चीख़ उठा, "ईसा मसीह ज़िन्दा हैं, अरे यह क्या हुआ।" डॉक्टर बहुत हैरत में पड़ गया, क्योंकि सारे घाव भर चुके थे और वे पूरी तरह ठीक हो चुकी थीं। बस यहीं से उनके जीवन में बड़ा बदलाव आया।

औरतों की नई इस्लामी तंज़ीम

सन् 1937 ई॰ में उन्होंने मुस्लिम औरतों की एक नई तंज़ीम (जमाअत) की बुनियाद रखी और बहुत कम वक़्त में न सिर्फ़ मिस्र की नामचीन औरतों को इससे जोड़ने में कामयाब हो गईं, बल्कि तंज़ीम के क़ियाम के एक साल के दौरान ही उनका राब्ता इख़वानुल-मुस्लिमून से हो गया। इख़वान के बानी और रहनुमा इमाम हसनुल-बन्ना ने उनके सामने पेशकश रखी कि वे अपनी तंज़ीम को इख़वान में मिला लें और इख़वान की बहनों और औरतों के विभाग की अध्यक्षता क़बूल करें। शुरू में तो उन्होंने इनकार किया, लेकिन सन् 1948 ईसवी के बाद खुद ही उसको इख़वान के साथ मिला दिया और खुद भी इख़वान की मेम्बर हो गईं। शेख़ हसनुल-बन्ना ने उनको इख़वान और वफ़्द पार्टी के नेता मुस्तफ़ा नुहास (जो उस समय मिस्र के प्रधानमंत्री थे) के बीच राब्ता बनाने की ज़िम्मेदारी भी दी। उन्होंने गिरफ़्तार होनेवाले इख़वान के हज़ारों परिवारों तक राहत पहुँचाने में अहम भूमिका निभाई। ज़ैनब ग़ज़ाली मिस्र के तानाशाह शासक जमाल अब्दुन्नासिर की खुलकर आलोचना करती रहती थीं और उसका समर्थन करने से उन्होंने इनकार कर दिया था। इसी लिए मिस्र की सरकार ने एक प्रस्ताव के ज़रिए से उनकी तंज़ीम को भंग कर दिया, उसकी पत्रिका को ज़ब्त कर लिया और उनको गिरफ़्तार कर लिया। सन् 1965 ईसवी से लेकर 1971 ईसवी तक वे जेल में रहीं। यहाँ तक कि अनवर सादात के ज़माने में सऊदी अरब के शासक शाह फ़ैसल ने उनकी रिहाई में व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी ली, तब अगस्त 1971 ईसवी में वे जेल से रिहा हुईं।

किताबें

ज़ैनब ग़ज़ाली को लिखने का भी शौक़ था। उनकी किताबें ये हैं— 1. अय्याम मिन हयाती, 2. नह्व बअस जदीद, 3. नज़रातु फ़ी किताबिल्लाह, 4. अस्माउल्लाहिल-हुस्ना, 5. ग़रीज़तुल-मर्अति, 6. इला इब्नती, 7. मुश्किलातुश्शबाबि वल-फ़तयाति, 8. तअम्मुलातु फ़िद्दीन वल-हयाति, 9. अल-अर्बईन अन्नववीयह।

क़ुरआन से प्यार

ज़ैनब ग़ज़ाली ने क़ुरआन मजीद की जो तफ़सीर लिखी है उसके बारे में ख़ुद बयान करती हैं कि "मुझे क़ुरआन से बहुत अधिक प्यार है। मैं उसकी आशिक़ हूँ और आशिक़ अपने महबूब से बातें करता और सरगोशी करता है। उसके साथ रहता, उसको गले लगाता और आँखों में बसाता है, इसी लिए मैंने क़ुरआन मजीद को अपने सीने से लगाया है। मैं उससे बाते करती हूँ और सिर्फ़ उसी के लिए बातें करती हूँ। मैं 60 साल से ज़्यादा मुद्दत तक क़ुरआन के साथ मस्जिदों में बातें करती रही हूँ, अकेले में भी और हज़ारों की भीड़ में भी, यानी 1927 ईसवी से लेकर ज़िन्दगी के आख़िरी लम्हें तक।"

उन्होंने बचपन ही में क़ुरआन मजीद पूरी तरह याद कर लिया था और जामिया अज़हर से बड़े उलमा के दर्स (कक्षा) में नियमित रूप से भाग लेकर दीन और शरीअत का इल्म हासिल किया था। वे क़ुरआन से बहुत गहरा लगाव रखती थीं, इसी लिए उन्होंने क़ुरआन को अपनी दावती सरगरमियों में रहनुमाई का बुनियादी ज़रिआ बनाया। वे क़ुरआन से सीधे रहनुमाई हासिल करती थीं। एक जगह लिखती हैं, "मैंने क़ुरआन से इसलिए मुहब्बत की ताकि मैं ज़िन्दा रहूँ, इसी लिए जब मुझे दूसरी बार ज़िन्दगी मिली तो मैंने यह पसन्द किया कि जिससे मुझे मुहब्बत है, उसी से मैं बातें करूँ। मैंने मुफ़स्सिरों (क़ुरआन की व्याख्या करनेवालों) की तरह क़ुरआन से बातें कीं। मैं अपने-आपको मुफ़स्सिर नहीं कहती, हाँ यह ज़रूर कह सकती हूँ कि मैं क़ुरआन की चाहनेवाली हूँ, इससे मुहब्बत करनेवाली और इसकी आशिक़।" हक़ीक़त में उनकी पूरी ज़िन्दगी उनके रात-दिन, उनकी सारी बातचीत और सारी जिद्दो-जुहद क़ुरआन ही के लिए और उसकी हिदायत के मुताबिक़ थी।

तफ़सीर लिखने की वजह

तफ़सीर लिखने का ख़याल पहली बार ज़ैनब को जेल में उस वक़्त आया जब जेल के अफ़सरों ने उनसे क़ुरआन छीन लिया, ताकि उसे वे न

पढ़ सकें। बहरहाल, उन्होंने क़ुरआन की तफ़सीर लिखकर मिस्र की प्रसिद्ध प्रकाशन संस्था 'दारुश्शुरूक़' के हवाले कर दी। उसके मालिक शेख़ मुहम्मद मुअल्लिम सैयद क़ुतुब और मुहम्मद क़ुतुब की किताबों के अलावा दूसरी इस्लामी किताबों के प्रकाशन और छपाई के मामले में मशहूर थे और इख़वान से ताल्लुक़ रखते थे। उन्होंने ही ज़ैनब ग़ज़ाली की किताब अय्याम मिन हयाती भी प्रकाशित की थी। जब ज़ैनब ने तफ़सीर का संकलन करके शेख़ मुहम्मद मुअल्लिम के हवाले किया तो उन्होंने जामिया अज़हर के तफ़सीर के प्रोफ़ेसर शेख़ अब्दुल-हई फ़रमावी से उसपर टिप्पणी करने के लिए कहा। शेख़ ने बहुत ध्यानपूर्वक मसौदे को देखा और उसपर प्रस्तावना भी लिखी।

तफ़सीर लिखने के सिलसिले का नियमित आरम्भ इस तरह हुआ कि एक दिन एक प्रकाशक संस्था की महिला मालिकन की ओर से सन्देश आया कि वह कम उम्र के बच्चों और बच्चियों के लिए 28, 29 और 30 पारे की ऐसी आसान तफ़सीर लिखवाना चाहती हैं जो उनकी भाषा और स्तर के अनुसार हो। ज़ैनब ग़ज़ाली ने उत्तर दिया कि मैंने कभी तफ़सीर लिखने के बारे में सोचा ही नहीं और यह मेरा मैदान नहीं है। लेकिन जब उस महिला ने ज़ैनब ग़ज़ाली से खुद राब्ता करके इसरार किया तो उन्होंने पहले इसतिख़ारा (अल्लाह से भलाई की दुआ) किया, अल्लाह से दुआ की, फिर अल्लाह के नाम से काम शुरू किया। वे हर जुमले को लिखने से पहले बार-बार सोचतीं कि हमारे परिवार के बच्चे और बच्चियाँ अपनी ज़हनी सलाहियत, समझ, नफ़सियात के मुताबिक़ इस जुमले को आसानी से समझ पाएँगे या नहीं? इस तरह उन्होंने तीन पारों की तफ़सीर कर ली। जब वे मसौदा लेकर उस औरत की तलाश में निकलीं तो उनका कहीं पता न चला। वापस लौटते हुए वे दारुश्शुरूक के संस्थापक शेख़ मुहम्मद मुअल्लिम के पास चली गईं और उनसे मालूम किया कि क्या वे इसे प्रकाशित कर सकते हैं? उन्होंने उसे लेकर देखा, फिर कहा, हाँ, लेकिन एक शर्त है, वह यह है कि आप पूरे क़ुरआन की तफ़सीर लिखें। ज़ैनब ग़ज़ाली ने मन में सोचा कि क्या करूँ? अल्लाह को क्या जवाब दूँगी? बहरहाल, उन्होंने अल्लाह से दुआ

करने के बाद तफ़सीर लिखनी शुरू की। तीन साल तक लगातार लिखती रहीं। वे रात के 12 बजे से लिखने के लिए बैठ जातीं और तहज्जुद और फ़ज्र की नमाज़ के अलावा किसी और काम के लिए न उठतीं। इस तरह सुबह आठ बजे तक लगातार वे लिखती रहतीं। जितना हिस्सा वे लिखतीं, उसे लेकर वे जामिया अज़हर के आलिम शेख़ अब्दुल-बासित के पास जातीं, जो उसे एक घण्टा पढ़ते। इसी तरह क़ुरआन की विद्याओं के दूसरे प्रोफ़ेसरों ने भी तफ़सीर के उस मसौदे को ध्यान से पढ़ा। वे तफ़सीर लिखने के दौरान रोज़ दो रकअत नमाज़ पढ़कर दुआ करतीं कि ऐ अल्लाह! तफ़सीर पूरी होने तक मुझे ज़िन्दा रख, ताकि मैं इस महान काम को पूरा कर सकूँ।

मेहर में क़ुरआन

उन्होंने क़ुरआन की आयतों के सिवा किसी और चीज़ को क़बूल नहीं किया। यहाँ तक कि शादी के मौक़े पर भी उन्होंने क़ुरआन ही को आगे रखा (तरजीह दी) और कहा कि उनको मेहर में क़ुरआन ही दिया जाए।

उस वक़्त के शासक को साफ़ जवाब

मिस्र के शासक जमाल अब्दुन्नासिर ने एक मौक़े पर उनसे मुलाक़ात करनी चाही तो उन्होंने उनसे मुलाक़ात करने से इनकार कर दिया और उनके दूत से साफ़-साफ़ कह दिया कि "मैं उस आदमी से हरगिज़ नहीं मिल सकती, जिसके हाथ शेख़ अब्दुल-क़ादिर औदा शहीद के ख़ून से रंगे हुए हैं।" इसी इनकार पर उनको जेल जाना पड़ा और बहुत ज़्यादा तकलीफ़ें भी सेहनी पड़ीं, लेकिन वे अपनी इस बुनियादी माँग से पीछे नहीं हटीं कि निज़ामे-हुकूमत में शूरा (सलाह-मश्वरे) को बुनियादी और मर्कज़ी (केन्द्रीय) अहमियत दी जाए।

दीनी और तहरीकी (मिशनरी) ज़िन्दगी

उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में लगभग 40 बार हज और 100 बार उमरा करने का सौभाग्य प्राप्त किया। इस्लामी मिशन को आगे बढ़ाने के लिए बहुत-से इस्लामी व अरब देशों का दौरा किया, जहाँ उन्होंने दीन के विषय

पर लेक्चर दिए। उन्होंने इस्लाम के प्रचार-प्रसार के मैदान में अपनी ज़िन्दगी के 53 साल ख़र्च किए। वे अनगिनत दीनी और विद्वान् व्यक्तियों से मिलीं, लेकिन जिनसे सबसे अधिक प्रभावित हुईं, उनमें इमाम हसनुल-बन्ना और हसनुल-हुज़ैबी का नाम सबसे ऊपर है।

अल्लाह तआला ने उनको इस्लाम के प्रचार-प्रसार और सुधार और तरबियत का ऐसा शौक़ और जोश प्रदान किया था कि उसका अन्दाज़ा करना बहुत मुश्किल है। 17 साल की उम्र में उन्होंने वक़्फ़ मंत्रालय से औरतों के संगठन 'जमीअतुस्सैयिदातिल-मुस्लिमात' का रजिस्ट्रेशन और 51 मस्जिदें बनवाने की सरकारी तौर पर इजाज़त हासिल की। उन्होंने बहुत कम वक़्त में इस्लाम का प्रचार-प्रसार करनेवाली औरतों की खेप-की-खेप तैयार कर दी। हर साल औरतों के 100 से अधिक बड़े-बड़े इज्तिमा पूरे मिस्र में लगातार आयोजित करती थीं। औरतों के लिए मस्जिदों में जगह तय कराई। उनके द्वारा स्थापित संगठन 'जमीअतुस्सैयिदात' केवल राहत और कल्याणकारी कामों तक ही महदूद नहीं रहा, बल्कि वह यतीमों की देखभाल करता, मस्जिदें बनवाता, प्रचार-प्रसार करनेवाली औरतों का प्रशिक्षण करता और घरेलू और सामाजिक समस्याएँ हल करने में आगे-आगे रहता। इस संगठन ने संचार माध्यमों के प्रभावी उपयोग की ओर भी ध्यान दिया और औरतों के लिए एक तरबियत देनेवाली पत्रिका भी जारी की। ज़ैनब ग़ज़ाली हर मंगल के दिन अपने घर में क़ुरआन की कक्षा अर्थात् दर्स आयोजित करती थीं जिसमें वे औरतों को नसीहत करतीं, उनके सवालों के उत्तर देतीं और फ़िक्र व इल्म के मामले में उनकी रहनुमाई करतीं।

हक़ बोलना और किसी से न डरना

सन् 1987 ईसवी में पाकिस्तान में पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) की सीरत पर एक अन्तर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंस में भाग लेने के लिए ज़ैनब ग़ज़ाली को भी बुलाया गया। मंच पर वे पाकिस्तान के राष्ट्रपति मरहूम ज़ियाउल-हक़ के बराबर में ही बैठी थीं। जब उनकी तक़रीर का वक़्त आया तो तक़रीर के दौरान पाकिस्तान के राष्ट्रपति को मुख़ातब करके बोलीं, "ऐ ज़िया! आप अल्लाह को क्या जवाब देंगे कि आपने उसकी शरीयत को इस देश में क्यों

लागू नहीं किया? मैं दुआ करती हूँ कि आप इस देश में अल्लाह की शरीअत को लागू करें।" यह सुनकर तालियों की गूँज के बीच पाकिस्तान के राष्ट्रपति की आँखों में आँसू भर आए। जब उन्होंने अंग्रेज़ी में तक़रीर की तो कहा, "मैं अरबी तो नहीं जानता, लेकिन मोहतरमा ज़ैनब ग़ज़ाली ने जो कुछ कहा है, मैंने उसे समझ लिया है, मैं आप सबसे दुआ करने की दरख़ास्त करता हूँ कि मैं शरीयत को लागू करने के सिलसिले में कोशिश कर सकूँ।"

इसी सफ़र में जनरल ज़ियाउल-हक़ ने उनसे मुलाक़ात के लिए अलग से 20 मिनट का समय दिया, लेकिन जब ज़ैनब ग़ज़ाली ने दुनिया के मुसलमानों के हालात बयान करने शुरू किए तो ढाई घंटे गुज़र गए और जनरल ज़ियाउल-हक़ की आँखों से लगातार आँसू बहते रहे।

उनके अन्दर नरमी और स्नेह भी बहुत था, इसी लिए अपने घर के बाहर सरकार की ओर से तैनात सुरक्षाकर्मियों को वे खाना भिजवाती थीं और उनकी ख़ैरियत आदि पूछा करती थीं। उनका किरदार और व्यवहार बहुत ऊँचे मेयार का था।

ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ मरहले

यदि ग़ौर से जायज़ा लिया जाए तो ज़ैनब ग़ज़ाली की ज़िन्दगी को चार हिस्सों में बाँटा जा सकता है—

पहला मरहला : उम्र के शुरुआती दस साल

इस मरहले में उनकी परवरिश अपने माँ-बाप के साथ हुई। जब दस साल की उम्र को पहुँचीं तो बाप का साया सिर से उठ गया और वे यतीम हो गईं।

दूसरा मरहला : जो कुछ सीखा और पढ़ा उसपर अमल करने और उसे लागू करने की कोशिश

औरतों की तंज़ीम से जुड़ना, जामिआ अज़हर के उलमा से बातचीत, उलमा के साथ विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श, फिर बड़े-बड़े उलमा की बातों से प्रभावित होकर अपने विचारों को बदलने के बारे में विचार, ये सब

दूसरे चरण की अहम घटनाएँ हैं। आग लगने के हादिसे के दौरान ज़ख़्मी हालत में अल्लाह से उनका वादा कि अगर वे ठीक हो गईं और नई ज़िन्दगी मिली तो वे सिर्फ़-और-सिर्फ़ इस्लामी मिशन और उसके प्रचार-प्रसार के लिए काम करेंगी। अल्लाह ने उनको ठीक कर दिया और उन्होंने औरतों की इस्लामी तंज़ीम बनाई, जो सामाजिक और इस्लाम के प्रचार-प्रसार के मैदान में लगातार काम करती रही।

तीसरा मरहला : इख़वानुल-मुस्लिमून से जुड़ना

इमाम हसनुल-बन्ना के हाथ पर सन् 1948 में बैअत की और 1954 के बाद मुर्शिद (मार्गदर्शक) हसनुल-हुज़ैबी के साथ मिलकर इख़वान को नए सिरे से संगठित किया। यह हक़ीक़त उस समय और सामने आई जब 1956 ईसवी में जमालुद्दीन अब्दुन्नासिर की सरकार ने उनकी कार का एक्सीडेन्ट कराना चाहा, फिर कुछ दिनों के बाद उनको गिरफ़्तार कर लिया और सरकार के ख़िलाफ़ बग़ावत का आरोप लगाकर जेल में डाल दिया। सरकार ने उनकी फाँसी की माँग की, आख़िर में उम्रक़ैद का फ़ैसला हुआ।

आख़िरी मरहला : इस्लामी मिशन के प्रचार-प्रसार में लगी रहीं

जेल के दौरान जिन हालात का उनको सामना करना पड़ा उनको लिखकर किताब के रूप में प्रकाशित किया, घर में क़ुरआन की क्लासें और दर्से-क़ुरआन का इन्तिज़ाम किया, औरतों को जमा किया। मिस्र के अरबी अख़बारों में लिखना शुरू किया। अल-जज़ायर के 'अश्शरक़ुल-अरबी' नामक अख़बार में उनके लिए पूरा एक पन्ना ख़ास था जिसमें वे तीन साल तक लगातार लिखती रहीं।

अफ़ग़ान जिहाद

अफ़ग़ानिस्तान पर रूस के हमले के बाद ज़ैनब ग़ज़ाली ने कई बार अफ़ग़ानियों के जिहादी मोर्चों का दौरा किया और रूसी फ़ौजों से लड़ रहे अफ़ग़ान मुजाहिदों और उनकी औरतों से मुलाक़ातें कीं और उनको सब्र और क़ुरबानी की नसीहत की।

औरतों में काम

ज़ैनब ग़ज़ाली ने क़ाहिरा की मशहूर मस्जिदों, मस्जिद अहमद-बिन-तूलून, मस्जिद इमाम शाफ़िई, जामिआ अज़हर, मस्जिद सुल्तान हसन में फ़िक़्ह, हदीस, तफ़सीर, पैग़म्बर की ज़िन्दगी और इस्लाम के प्रचार-प्रसार के विषय पर दर्स देना शुरू किया। उन्होंने दर्स के इस सिलसिले को काफ़ी फैलाया। खुद औरतों को तक़रीर करने की तरबियत देने के लिए एक मुस्तक़िल इदारा क़ायम किया जिसमें 6 महीने का कोर्स रखा। वहाँ से बड़ी तादाद में तक़रीर करनेवाली और नसीहत करनेवाली औरतें तैयार हुईं।

ज़ैनब ग़ज़ाली तमाम तूफ़ानों और आँधियों के मुक़ाबले में अपना क़दम जमाए रहीं। उन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी को इस्लाम के प्रसार और औरतों की तरबियत के लिए वक़्फ़ (समर्पित) कर दिया। वे स्कूलों, कॉलेजों और यूनिवर्सिटियों की छात्राओं को चाहे वे किसी भी विषय की हों अपने यहाँ बुलातीं उनको इज्तिमा में भाग लेने के लिए आमंत्रित करतीं, उनकी समस्याएँ सुनतीं, उनसे बातचीत करतीं, उनके सवालों के जवाब देतीं और उनको क़ुरआन और हदीस और इस्लामी ज़िन्दगी से क़रीब करने की कोशिश करतीं।

पर्सनल सेक्रेट्री की गवाही

शेख़ बद्र मुहम्मद बद्र जो ज़ैनब ग़ज़ाली के साथ 23 साल तक उनके मीडिया सेक्रेट्री की हैसियत से रहे हैं, लिखते हैं—1982 ईसवीं के दिसम्बर के जाड़े के दिनों में एक दिन मिस्र के बड़े पत्रकार जाबिर रिज़्क़ (मिस्र के एक वृद्ध पत्रकार, मेरे उस्ताद और इख़वान के साथी) ने मुझसे इस्लामी मिशन का प्रचार करनेवाली बुलन्द मर्तबा ज़ैनब ग़ज़ाली से मुलाक़ात करने को कहा और बताया कि उनको एक मीडिया सेक्रेट्री की ज़रूरत है जो उनके पत्रकारिता से सम्बन्धित कामों को पूरा कर सके, दिवंगत (मरहूम) जाबिर रिज़्क़ ने मुझे यह ज़िम्मेदारी उस्ताद उमर तिलमिसानी से मश्वरे के बाद सुपुर्द करने का मन बनाया। मैं 1980 ईसवी के आख़िरी ज़माने में इख़वान के मशहूर तरजुमान 'अद्दावह' में पत्रकार की हैसियत से अपनी सेवाएँ प्रदान

कर रहा था, जिसे राष्ट्रपति सादात ने 1981 ई॰ में बन्द कर दिया। बहरहाल इस नई ज़िम्मेदारी के नतीजे में मुझे 20वीं सदी में इस्लाम के प्रचार-प्रसार के मैदान के एक बड़ी शख़सियत से क़रीब होने का मौक़ा मिला। मैं जाबिर रिज़्क़ के साथ ज़ैनब ग़ज़ाली के घर गया, जहाँ उन्होंने अपनी रिवायत के मुताबिक़ स्वागत किया, जैसा कि वे हर मेहमान का किया करती थीं। फिर उन्होंने तमाम ज़िम्मेदारियाँ समझाईं। अतः मैं हर सोमवार को उनके दफ़्तर जाता और सुबह से रात तक लगातार काम करता। मैं उनके लिए समाचार माध्यम, मीडिया, पत्रकारों से मुलाक़ात और मीटिंग के लिए समय तय करता, इसकी तैयारी करता, प्रेस में आनेवाले पत्रों पर बातें करता, फिर उनके उत्तर लिखवाता। प्रतिष्ठित अख़बारों के लिए ज़ैनब ग़ज़ाली के दसियों लेखों को अख़बारों और पत्रिकाओं तक पहुँचाता, उनके साथ विदेशी सफ़र में (जहाँ उनको कॉन्फ्रेंस में भाग लेने के लिए बुलाया) जाता। जिस समय मैंने मीडिया की ज़िम्मेदारी सम्भाली, उस समय उनकी उम्र 66 साल से अधिक थी। जबकि मैं उस समय 24 साल का था। वे मेरे लिए एक सम्मानित, स्नेह करनेवाली माँ, स्नेहपूर्वक तरबियत करनेवाली, चाक़ो-चौबन्द रहनेवाली मुजाहिदा और सब्र करनेवाली मिशनरी थीं।

शेख़ बद्र लिखते हैं—मैं जब 1977 ई॰ में यूनिवर्सिटी के पहले साल में था, उस समय मैंने उनकी किताब 'अय्याम मिन हयाती' पढ़ी थी और नासिर की जेलों में उन्होंने जो ज़ुल्म सहे थे, उनको पढ़कर बहुत मुतास्सिर हुआ था। यह अल्लाह की महरबानी थी कि मैं उनके साथ 23 साल तक मीडिया की ज़िम्मेदारी अदा करता रहा, यहाँ तक कि अगस्त 2005 ई॰ में उनका इन्तिक़ाल हो गया।

शेख़ बद्र मुहम्मद बद्र लिखते हैं, "मैं ज़ैनब ग़ज़ाली के अनगिनत सफ़रों में उनके साथ रहा, हर दावती सफ़र में मेरे दिल में उनके लिए एहतिराम, सम्मानित व्यवहार और सच्चाई के रास्ते में उनकी कोशिश के ताल्लुक़ से तारीफ़ के जज़्बात में इज़ाफ़ा ही हुआ। मैं उनके सन्तुलित प्रचार के तरीक़े, अच्छी सामाजिक विचारधारा, लोहे की तरह इरादा और चट्टान की तरह जम जाने और क़ुरआन के पैग़ाम और हिदायत की कामयाबी पर पक्के

यक़ीन से ग़ैर-मामूली तौर से मुतास्सिर हुआ। उनका दिल और उनका पूरा वुजूद केवल अल्लाह के लिए था। वे सच्चाई के रास्ते के सभी कष्ट, कठिनाइयों, थकान, दुख को ख़ुशी-ख़ुशी सहन करतीं, क्योंकि उन्होंने अल्लाह से वादा किया था कि वे उसकी ख़ुशी के लिए जीवन-भर लगातार मेहनत और कोशिश करती रहेंगी। वे इस आयत को दोहराया करती थीं—

> "इनसे कहो, हमें हरगिज़ कोई (बुराई या भलाई) नहीं पहुँचती लेकिन वह जो अल्लाह ने हमारे लिए लिख दी है। अल्लाह ही हमारा मौला (सरपरस्त) है और ईमानवालों को उसी पर भरोसा करना चाहिए।" (क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-51)

उनकी ज़िन्दगी इस्लाम की ख़िदमत के लिए वक़्फ़ थी

उम्र के 88 साल उन्होंने अल्लाह की इताअत और फ़रमाँबरदारी, इस्लाम पर होनेवाले हमलों को रोकने और नई नस्ल के सामने दीने-इस्लाम की बड़ाई, एतिदाल और बराबरी की शिक्षाओं को फैलाने में गुज़ार दिए।

ज़ैनब ग़ज़ाली अपने भाइयों, सअदुद्दीन, अली और मुहम्मद से छोटी थीं। उनके वालिद (बाप) बचपन में उनको अपने साथ ख़ास उन मीटिंगों में ले जाया करते थे जहाँ उनकी बड़े व्यापारियों और जाने-माने लोगों से मुलाक़ातें होतीं, हालाँकि उनकी उम्र उस समय चार-पाँच साल की थी। उनके वालिद के इस तरीक़े से ज़ैनब ग़ज़ाली के अन्दर आत्मविश्वास और इरादे में मज़बूती की सलाहियत पैदा हुई। लेकिन अल्लाह ने ऐसा किया कि तिजारत में वालिद को अचानक बहुत बड़ा घाटा हुआ, जिसकी वजह से उनको दिल का दौरा पड़ा और वे इस दुनिया से विदा हो गए और ज़ैनब यतीम हो गईं।

उस ज़माने में मिस्र में मुस्लिम बच्चियों की पढ़ाई की तरफ़ बहुत कम ध्यान दिया जाता था। मुस्लिम समाज लड़कियों की तालीम पर पैसे ख़र्च करने के बजाय उनकी शादी की तैयारी करता था। बहरहाल मुश्किल हालात में ज़ैनब ग़ज़ाली ने अपनी पढ़ाई जारी रखी, फिर जहाँ पढ़ाई रुकी, वहाँ उन्होंने ख़ुद अपने तौर पर पढ़ाई शुरू कर दी और साथ ही इल्म, अदब और

सियासत से जुड़े हुए लोगों के बारे में जानकारी हासिल करना शुरू किया। यही नहीं, बल्कि उन्होंने उन लोगों से ख़त व किताबत भी शुरू कर दी। उन्हीं लोगों में मिस्र के बड़े अदीब अब्बास महमूद अक़्क़ाद भी थे।

उस ज़माने में मिस्र की औरतों की तंज़ीम (अल-इत्तिहादुन्निसाई) में सिर्फ़ नामचीन लोगों, मंत्रियों, सरकार के ऊँचे पदों पर बैठनेवाले अफ़सरों की बीवियाँ हीं मेम्बर हुआ करती थीं, लेकिन तंज़ीम की सद्र ने दूसरी महिला मेम्बरों के विरोध के बावजूद केवल योग्यता के आधार पर 1935 ई॰ में केवल 17 साल की उम्र में उनको तंज़ीम के उच्च स्तर की सभा (Governing Body) का नियमित मेम्बर बनाया। पूरे मिस्र में, बल्कि पूरी अरब दुनिया में औरतों की यह वह एक मात्र तंज़ीम थी जो औरतों के लिए काम कर रही थी। इसका मक़सद औरतों के सियासी, समाजी और मआशी अधिकारों के लिए काम करना था। लेकिन इस तंज़ीम पर पश्चिमी सभ्यता का समर्थक होने, उदार और सेकुलरवाद का गहरा असर होने का आरोप था और इस्लाम से दूरी का भी।

बहरहाल इसके बाद दो-तीन घटनाएँ घटित हुईं। पहली घटना फ़्राँस के सफ़र की तैयारी के दौरान ख़्वाब में अपने वालिद को देखना और वालिद का इस सफ़र से रोकना, दूसरा जामिया अज़हर के वफ़्द के साथ बातचीत और सात हफ़्ते तक लगातार अज़हर के उलमा के औरतों के अधिकारों पर भाषणों को सुनना, तीसरी (सिलिण्डर फटने से) आग लगने की घटना। इन घटनाओं ने उनकी ज़िन्दगी का रुख़ मोड़ दिया। आख़िर में 1937 ई॰ में 12 रबीउल-अव्वल, 1356 हि॰ को जामिआ अज़हर के शरीआ कॉलेज की इमारत में उन्होंने औरतों की पहली इस्लामी तंज़ीम के क़ियाम का एलान किया। इस समारोह में जामिआ अज़हर के बड़े उलमा भी शामिल हुए।

घरेलू ज़िन्दगी

उनकी पहली शादी मुहम्मद हाफ़िज़ तीजानी से हुई जो हदीस के एक बड़े आलिम और 'तीजानी' सिलसिले के सूफ़ी शेख़ थे, लेकिन यह शादी सिर्फ़ दो साल तक बाक़ी रही (यानी 1942 ई॰ से 1944 ई॰ तक) क्योंकि

मीडिया और सियासी सर्गरमियों की वजह से एक दिन पुलिस उनके घर आ गई, जिसपर ज़ैनब के शौहर हाफ़िज़ तीजानी घबरा गए। ज़ैनब ने उसी वक़्त घर में लगी शाह फ़ारूक़ की तसवीर दीवार से उखाड़कर ज़मीन पर पटख़ दी और उसे पैरों से रौंद डाला और अचानक पुलिस के घर में घुस आने और उनके बारे में सवाल करने पर सख़्ती से विरोध किया। इस घटना से उनके शौहर बहुत नाराज़ हुए। उनको यह बात सताने लगी कि मिस्र सरकार अब उनके पीछे पड़ जाएगी। इसलिए यह इख़्तिलाफ़ इतना गहरा हो गया कि उन्होंने अपने शौहर से खुद तलाक़ ले ली, लेकिन अपने साफ़ विचारों से पीछे नहीं हटीं। इसके बाद वे लगातार 24 घण्टे इस्लाम के प्रचार-प्रसार, समाज के सुधार और इसकी तरबियत, तालीम, राहत और सहायता कार्यों में असाधारण रुचि के साथ मसरूफ़ रहने लगीं। इसी लिए 8 साल तक उन्होंने शादी की तरफ़ बिलकुल ध्यान नहीं दिया।

1951 ई॰ में उनकी दूसरी शादी एक व्यापारी मुहम्मद सालिम से हुई। वे भी इख़्वान से जुड़े हुए थे, लेकिन सरकारी एजेन्सियों को इसकी जानकारी नहीं थी। जब मुख़बिरों और जासूसों से बचने के लिए आधी रात के बाद इख़्वान के कार्यकर्ताओं की सभाएँ ज़ैनब के घर पर होने लगीं, ताकि मुश्किलों से बचते हुए नए सिरे से इख़्वान की तंज़ीमी ढाँचे को मज़बूत किया जाए तो उनके शौहर को परेशानी हुई कि सरकार उनकी बीवी को परेशान न करे। उन्होंने अपनी मुजाहिद और दावत का काम करनेवाली बीवी ज़ैनब से अपने इस अन्देशे का इज़हार किया। जवाब में ज़ैनब ने कहा, "मैंने आपसे शादी कुछ शर्तों के साथ की है, जिनको आपने खुद क़बूल किया है। मैंने इमाम हसनुल-बन्ना के हाथ पर अल्लाह की राह में मौत की बैअत की है, अभी तो मैं एक क़दम भी नहीं बढ़ी हूँ लेकिन इसकी उम्मीद रखती हूँ, अगर आपकी शख़्सी मस्लहत या तिजारती काम मेरे इस्लामी काम से टकराते हों और अगर मेरी शादीशुदा ज़िन्दगी दावत की राह में रुकावट बनती हो, तो फिर हमारे रास्ते अलग-अलग हैं। मैं आपसे इन कोशिशों में शरीक होने की माँग नहीं करती, लेकिन यह मेरा अधिकार है कि मैं आपसे कहूँ कि अल्लाह की राह में जिहाद करने से आप मुझे न रोकें।

क्योंकि मेरी ज़िम्मेदारी मुझे मुजाहिदों की सफ़ों के बीच होने की माँग करती है। हमारे बीच पूरा भरोसा होना चाहिए। आपने जब ऐसी औरत से शादी की है जिसने अपने-आपको 17 साल की उम्र से जिहाद और इस्लामी हुकूमत के क़ियाम के लिए वक़्फ़ कर दिया है तो अगर शादी और इस्लाम की दावत के बीच टकराव हो तो शादी ख़त्म हो सकती है, लेकिन इस्लामी दावत मेरे वुजूद में बाक़ी रहेगी।"

शौहर से साफ़-साफ़ बात करने के बाद ज़ैनब की सर्गरमियाँ बहुत बढ़ गईं। रात-दिन इख़वान के कार्यकर्ताओं का उनके घर पर आना-जाना बढ़ गया। ज़ैनब के शौहर आधी रात में दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ सुनकर नींद से उठ जाते और आनेवालों के लिए ख़ुद ही दरवाज़ा खोलते, उनको ऑफ़िस में बैठाते, फिर उनके लिए चाय, खाना तैयार कराते, फिर ज़ैनब के पास जाकर उन्हें बहुत नरमी से जगाते और कहते कि ऑफ़िस में कुछ बच्चे आए हैं, सफ़र की मुश्किलात और थकान का असर उनके चेहरों पर दिखाई दे रहा है। वे आनेवाले लोगों से मुलाक़ात के लिए ऑफ़िस में चली जातीं और शौहर सोने के लिए चले जाते और कहते कि फ़ज्र की नमाज़ के लिए मुझे जगा देना। वे जवाब देतीं, इन-शाअल्लाह! दिलचस्प बात यह है कि ज़ैनब मुहम्मद सालिम की पहली या दूसरी बीवी नहीं, बल्कि तीसरी बीवी थीं। शादी के वक़्त ज़ैनब ग़ज़ाली ने जो शर्तें रखी थीं, उनमें से एक यह भी थी कि वे अपनी किसी बीवी को तलाक़ नहीं देंगे, बल्कि तीनों के साथ इनसाफ़ करेंगे और किसी को किसी पर तरजीह नहीं देंगे। अपने शौहर की इकलौती बेटी सफ़िया की देखभाल ज़ैनब ग़ज़ाली ने जीवन-भर पूरी तवज्जोह से की। यह उनकी सौतन सफ़िया की बेटी थीं।

सरकार की तरफ़ से ज़ैनब ग़ज़ाली की गिरफ़्तारी का असर उनके शौहर पर बहुत ज़्यादा हुआ। उनको फ़ालिज हो गया और वे आधे धड़ से मजबूर हो गए। इसी हालत में नासिर की हुकूमत के लोगों और सुरक्षाकर्मियों ने उनपर बहुत दबाव बनाया और उनको डरा-धमकाकर मजबूर किया कि वे अपनी बीवी को तलाक़ दे दें, ताकि उस तलाक़नामे को जेल में ज़ैनब ग़ज़ाली को दिखाकर उन्हें ज़्यादा नफ़सियाती तकलीफ़ दी जा सके। शुरू में तो

उन्होंने इनकार किया, लेकिन फिर ग़ैर-मामूली दबाव, सख़्ती और डर के माहौल में मजबूर होकर तलाक़नामे पर हस्ताक्षर कर दिए। लेकिन इसी के साथ मिस्र की अदालत में एक वसीयत दाख़िल करा दी जिसमें लिखा था कि ज़ैनब ग़ज़ाली उनकी बीवी हैं, अल्लाह और उसके रसूल के सामने वे इसकी गवाही देते हैं, वे इस दुनिया से इस हालत में विदा होंगे कि ज़ैनब ही उनकी बीवी होंगी। ज़ैनब ग़ज़ाली जब जेल से रिहा होकर बाहर आईं तो उन्होंने उस वसीयत को देखा। मालूम रहे कि जेल में क़ैद के दौरान ही उनके शौहर का इन्तिक़ाल हो चुका था।

भाई-बहन

ज़ैनब ग़ज़ाली के बड़े भाई इंजीनियर सअदुद्दीन सियासत से दूर रहते थे। वे अपनी बहन की गिरफ़्तारी और क़ैद से बहुत दुखी रहते थे। उनके दूसरे भाई अली मिस्री वित्त मंत्रालय में वकील के औहदे पर थे और सियासी तौर पर 'हिज़्बे-वतनी' (नेशनल पार्टी) की ओर झुकाव रखते थे। तीसरे भाई मुहम्मद अल-हुसैनी इल्म-दोस्त (विद्या-प्रेमी) और शक्ल व सूरत भी आलिमों की तरह अपनाए हुए थे। वे इमाम हसनुल-बन्ना के क़रीब थे। चौथे भाई नसरुद्दीन सैफ़ुद्दीन के नाम से मशहूर थे। वे वफ़्द पार्टी के कट्टर समर्थक थे। मिस्र की सियासी पार्टी वफ़्द पार्टी में थे और मेम्बर ऑफ़ पार्लियामेन्ट भी थे। उनके पाँचवें भाई अब्दुल-मुनइम दैनिक 'अल-इहराम' के सहाफ़ी थे। पहले वे सूफ़ीवाद की तरफ़ झुके, उसके बाद कम्यूनिज़्म (साम्यवाद) के समर्थक हो गए। वे मज़दूरों के अधिकारों के लिए बहुत सरगर्म रहे, इराक़ में सियासी पनाहगुज़ीन थे। लेकिन अपनी बहन ज़ैनब की मेहनत से वे दूसरी बार इस्लाम की तरफ़ आकर इबादतों में लग गए और भलाई के लिए ज़िन्दगी गुज़ारी।

उनकी दो बहने थीं। एक बहन 'हिकमत' अपने ख़यालों के एतिबार से नासिर से क़रीब थीं। बहन की गिरफ़्तारी और क़ैद पर दुखी होने के बावजूद वे नासिर की समर्थक थीं। दूसरी बहन 'हानिम' जो हयात के नाम से जानी जाती थी, ज़ैनब से ज़्यादा क़रीब थीं। अपने शौहर के इन्तिक़ाल

के बाद वे ज़ैनब ही के साथ रहतीं और उनके कामों में हाथ बटाया करतीं। भाइयों- बहनों में मौजूद फ़िक्री इख़्तिलाफ़ों के बावजूद ज़ैनब का एहतिराम और उनका मक़ाम सबके दिलों में समान रूप से था और अख़्लाक़ी एतिबार से सब बुलन्द थे।

सऊदी हुकूमत से ताल्लुक़ात

ज़ैनब ग़ज़ाली ने सऊदी हुकूमत को दीन की ख़िदमत करने की तरफ़ ध्यान दिलाना शुरू किया। इस सिलसिले में उन्होंने हुकूमत के शासक सऊद-बिन-अब्दुल-अज़ीज को ख़त लिखे। जिनमें सभी मैदानों में शरीअत को लागू करने की ज़रूरत और अहमियत को उजागर करते हुए विस्तृत बुनियादों पर इस्लामी ख़िदमत के मुख़्तलिफ़ पहलूओं और मैदानों पर रौशनी डाली। सन् 1940 ई॰ के आख़िर में ज़ैनब ग़ज़ाली ने सूद से पाक इस्लामी बैंकिग के क़ियाम का नज़रिया शाह सऊद के सामने उस समय पेश किया जब इस्लामी दुनिया में इसका दूर-दूर तक कोई नाम न था, ताकि माली मामलों में इस्लामी उसूलों की बुनियाद पर एक बेहतर नमूना सामने आ सके।

ज़ैनब ग़ज़ाली ने 1951 ई॰ में माहवार फिर हफ़्तावार 'अस्सय्यिदातुल-मुस्लिमात' नामी रिसाले में कई लेख और शोध पत्र इसी तरह से लिखे कि सऊदी हुकूमत एक इस्लामी और दीनी हुकूमत है जिससे इस्लामी दुनिया को बड़ी उम्मीदे हैं। जब 1950 ई॰ के शुरू में शाह सऊद ने मिस्र का दौरा किया तो उन्होंने 'अस्सय्यिदातुल-मुस्लिमात' के मर्कज़ी दफ़्तर का भी मुआयना किया और इस तंज़ीम की सर्वोच्च सभा के मेम्बरों से मुलाक़ात की। ज़ैनब ग़ज़ाली ने उस समय रिसाले के पहले पेज पर शाह सऊद की तसवीर भी छाप दी। ज़ैनब हर साल मिस्र की औरतों के बड़े वफ़्द के साथ हज करने जाया करती थीं और शाही मेहमान हुआ करती थीं। सऊदी शासक के साथ इस ताल्लुक़ ने ज़ैनब ग़ज़ाली को इस बात का मौक़ा दिया कि वे सऊदी हुकूमत के सामने मुस्लिम लड़कियों की तालीम से मुताल्लिक़ एक असरदार तजवीज़ पेश करें। वहाँ 1950 ई॰ तक पूरे देश में सरकारी स्तर पर लड़कियों की तालीम का कोई बाक़ायदा निज़ाम नहीं था और न लड़कियों की तालीम

का निज़ाम सरकार की ओर से किया जा रहा था। ज़ैनब ने बहुत ही संजीदगी के साथ सऊदी लड़कियों की तालीम के सम्बन्ध में सऊदी हुकूमत के सामने बुनियादी तौर पर एक तजवीज़ रखी। इसके नतीजे में शिक्षा मंत्रालय के तहत सऊदी लड़कियों की तालीम के लिए नियमित रूप से एक इदारा वुजूद में आया।

सन् 1960 ई॰ के शुरू से ज़ैनब ग़ज़ाली जब भी सऊदी अरब का सफ़र करतीं तो लड़कियों के स्कूलों में भी ज़रूर जातीं और प्रबन्धकों से मुलाक़ातें करतीं, छात्राओं से मिलतीं और सबको इस्लामी पहचान को अपनाने की नसीहत करतीं। वे कहतीं कि इस्लाम को ज़िन्दा करने की ज़िम्मेदारी सिर्फ़ मर्दों के कन्धे पर ही नहीं, बल्कि औरतों के कन्धों पर भी है और इस ज़िम्मेदारी का एहसास औरतों की तालीम के बिना नहीं हो सकता।

अच्छे अख़लाक़ का आइना

वे अच्छे अख़लाक़ का आइना थीं। आनेवाले मेहमानों का (जो पूरी दुनिया से उनके पास आते रहते थे) ख़ुद इस्तिक़बाल करतीं, ख़ुद खाने का इन्तिज़ाम करतीं, उस वक़्त तक दस्तरख़ान पर नहीं बैठतीं जब तक कि ड्राइवर, माली, सफ़ाईकर्मी, बर्तन धोनेवाले और दूसरे नौकर सब खाने की अपनी प्लेट न ले लें।

एक बार स्कन्दरिया से मेडिकल का एक छात्र आया और बोला, "ज़ैनब मेरी माँ और हसनुल-बन्ना मेरे बाप हैं।" ज़ैनब ग़ुस्सा होने के बजाय फ़ौरन समझ गईं कि इस नौजवान की नफ़सियाती और ज़ेहनी हालत ठीक नहीं है। उन्होंने जवाब दिया कि न तो उनके कोई औलाद है और न हसनुल-बन्ना से उनकी शादी हुई थी। फिर उस नौजवान को उन्होंने इलाज के लिए दिमाग़ के अस्पताल भेजा और उसकी देखभाल करती रहीं।

निडर और आज़ाद सहाफ़त (पत्रकारिता)

ज़ैनब ग़ज़ाली का रिसाला 'अस्सय्यिदातुल-मुस्लिमात' सन् 1951 ई॰ से निकलना शुरू हुआ। उसके कवर पर एक बुर्क़ापोश औरत की तसवीर हुआ करती थी। चाँद के हर महीने की पहली तारीख़ को रिसाला बाज़ार में आ

जाया करता था। उसमें लेख अलग-अलग विषय पर हुआ करते थे। लेकिन जब मिस्र के सियासी हालात में बदलाव शुरू हुए तो इस रिसाले की ज़बान भी मुतास्सिर होने लगी, सरकारी निगराँ एजेन्सियों ने इसकी स्क्रीनिंग शुरू कर दी, यहाँ तक कि इसका पन्ना-पन्ना सादा रह जाता, क्योंकि उसकी सामग्री को प्रेस में ही सरकार की तरफ़ से हटवा दिया जाता था। कभी सिर्फ़ शीर्षक और लेखक का नाम ही रह जाता बाक़ी सारा लेख हटा दिया जाता। ज़्यादातर ज़ैनब ग़ज़ाली के ही लेख निकाले जाते थे। लेकिन इन सबके बावजूद ज़ैनब का क़लम ब्रिटिश उपनिवेशवाद के ख़िलाफ़ आग उगलता रहा। मिसाल के तौर पर एक बार उन्होंने एक लेख लिखा जिसका शीर्षक था, "कुत्तों के दूत को देश से निकालो"। दूत का मतलब ब्रिटेन का दूत था जो मिस्र के अन्दरूनी मामलों में बहुत ज़्यादा दख़ल दिया करता था। उन्होंने एक लेख का नाम लिखा, "अज़हर के शेख़ इस्तीफ़ा दें"। इसकी वजह यह थी कि अज़हर के शेख़ बजट को मंजूर करने के लिए वित्त मंत्री के पास चले गए थे, जिसे ज़ैनब ने उनके मक़ाम के मनाफ़ी समझा। उन्होंने लिखा कि वित्त मंत्री को खुद अज़हर के शेख़ के पास जाना चाहिए था। वे एक हफ़्तावारी पत्रिका 'अल-वओयुल-जदीद' और 'शुऊरे नूर' भी निकाला करती थीं।

काम का तरीक़ा और प्राथमिकताएँ

वे अपनी बातों और भाषण में बुनियादी और अहम मसलों का ही ज़िक्र किया करती थीं, वे मामूली और ग़ैर-अहम मसलों को बयान करना पसन्द नहीं करती थीं। वे ऐसी समझदार मुस्लिम औरत को रास्ता दिखाने और उसके अन्दर तामीरी रुझान को बढ़ाने में ज़्यादा दिलचस्पी रखती थीं जो देश और क़ौम के मामलात, परिवार और समाज की भलाई और उम्मत की फ़िक्र के बारे में सोचती हो। इसलिए जब भी वे औरतों की किसी सभा को सम्बोधित करतीं तो मुस्लिम उम्मत के एहसास को बयान करतीं और मुस्लिम औरतों को उम्मत के ज़िन्दा करने और इसके तामीर करने और बदलाव के कामों में अपने भाइयों के साथ मिलकर काम करने की ज़रूरत पर ज़ोर देतीं, वे जिस तरक़्क़ी और तामीर की ज़रूरत है उसे पाने में औरतों के किरदार

के बारे में रहनुमाई करतीं। वे कोशिश करतीं कि पूरी उम्मत के हालात और मसाइल के बारे में औरतों की सोच और विचार में गहराई पैदा हो और वे इससे वाक़िफ़ हों, ताकि इसके मुताबिक़ वे अपने बच्चों-बच्चियों की तरबियत कर सकें, और उनको दीन और उम्मत की ख़िदमत करने के लायक़ बना सकें। वे औरतों के ऐसे सवालों से दुखी हो जाया करती थीं जो काजल-सुरमा लगाने, नाख़ुन पॉलिश करने, भौहें बारीक कराने और नक़ाब आदि के सिलसिले में होते, क्योंकि वे बाहरी शक्ल व सूरत के बजाए दिल के जौहर को देखा करती थीं। वे जामिया अज़हर के घोषित विचारों के मुताबिक़ अपनी राय रखती थीं कि चेहरा छिपाने से न मना किया गया है और न इसे ज़रूरी किया गया है। वे फ़िक़्ह के तीन मामलों (तलाक़, दूध पिलाने और विरासत) पर गहरी नज़र रखने के बावजूद जवाब देने से बचा करती थीं और पूछनेवाली औरत को जामिआ अज़हर या किसी जाने-माने फ़क़ीह के पास भेज देती थीं।

अच्छा शौक़

उनका अपना ख़ास कमरा उनकी अच्छी पसन्द का आईना था। उसमें एक कोना नमाज़, एतिकाफ़ और तिलावत के लिए ख़ास था। कमरे में हर चीज़ एक तरतीब के साथ रखी होती, कमरे के अन्दर भीनी ख़ुशबू फैली होती, उनके इस कमरे में किसी को आने की इजाज़त नहीं थी, सिवाय उनकी ख़ास सहेलियों के।

ज़िम्मेदारी का एहसास

एक बार ज़ैनब ग़ज़ाली के पास अमेरिका की एक इस्लामी तंज़ीम की ओर से दीने-इस्लाम के विषय पर लेक्चर देने के लिए निमंत्रण आया। वे क़ाहिरा एयरपोर्ट पहुँचीं तो मिस्र की सरकार ने उनको सफ़र करने से रोक दिया। वे अदालत गईं। अदालत ने उनके सफ़र पर सरकार की तरफ़ से लगाई गई पाबन्दी को रद्द कर दिया। वे दूसरी बार एयरपोर्ट पहुँचीं तो उनको फिर रोका गया, लेकिन इस बार उन्होंने अदालत का फ़ैसला दिखाया और दलीलों के साथ बात की तो उनको सफ़र की इजाज़त दे दी गई। जब वे

अमेरिका की उन जगहों पर गईं जहाँ लेक्चर देना था तो वहाँ तेज़ ठण्डक थी, बर्फ़ जमी हुई थी, तापमान (-40°) था, लेकिन इसके बावजूद ज़ैनब ग़ज़ाली ने बहुत फुर्ती और ख़ुशदिली के साथ दौरा किया और कोशिश की कि वक़्त का ज़्यादा-से-ज़्यादा मुफ़ीद इस्तेमाल हो सके।

जिस वक़्त ज़ैनब ग़ज़ाली जनरल ज़ियाउल-हक़ के ज़माने में पाकिस्तान के दौरे पर थीं और इस्लामाबाद के एक होटल में ठहरी हुई थीं तो फ़लिस्तीनी प्रचारक शहीद अब्दुल्लाह अज़्ज़ाम की बीवी उम्मे-मुहम्मद ने उनसे मुलाक़ात की और कहा कि पाकिस्तान की ख़ुफ़िया एजेन्सी उनके पति की तलाश में है और वे गिरफ़्तारी के डर से रूपोश (भूमिगत) हो गए हैं। आप इस मामले में जनरल ज़ियाउल-हक़ से दख़ल देने की गुज़ारिश करें। ज़ैनब ग़ज़ाली डॉ॰ अब्दुल्लाह अज़्ज़ाम को उस वक़्त से जानती थीं जब 1970 ई॰ के शुरू में वे जामिआ अज़हर से फ़िक़्ह में पीएच॰ डी॰ कर रहे थे। ज़ैनब ग़ज़ाली की गुज़ारिश पर जनरल ज़िया ने फ़ौरन कार्रवाई की।

सन् 1989 ई॰ में जनरल ज़ियाउल-हक़ की शहादत के बाद जब ज़ैनब तीसरी बार पाकिस्तान गईं तो उनकी बीवी से मिलीं। बेगम ज़िया ने बातचीत के दौरान बताया कि जनरल ज़िया शहादत से कुछ दिन पहले एक दिन खाना खा रहे थे कि उनके पास रूसी सरकार की तरफ़ से धमकी आई और उन्होंने महसूस किया कि इस बार यह धमकी सच साबित होगी। ठीक उसी वक़्त मियाँ तुफ़ैल मुहम्मद (अमीरे-जमाअते इस्लामी, पाकिस्तान) का ख़त मिला कि आप अफ़ग़ान मुजाहिदीन की मदद जारी रखें और शरीअत को लागू करने की कोशिश करते रहें। उस ख़त से जनरल साहब के दिल को सुकून हुआ और उन्होंने रूस की धमकी की परवाह नहीं की।

दावत का असर

एक दिन मिस्र की अदालत के एक जज ज़ैनब ग़ज़ाली की बनाई हुई औरतों की तंज़ीम के दफ़्तर आए और उनका शुक्रिया अदा करते हुए बताया, ''मेरी बीवी से मेरे मतभेद बहुत बढ़ गए थे, यहाँ तक कि तलाक़ की नौबत आ गई थी, लेकिन मेरी बीवी में ख़ुद-ब-ख़ुद बड़ी तबदीलियाँ आ

गईं। वे मेरा बहुत ध्यान रखने लगीं। मुझे इस तबदीली पर बहुत हैरत हुई। जब मैंने उनका चुपके से पीछा किया तो मालूम हुआ कि वे आपके दर्स (क़ुरआन की क्लास) में भाग लेतीं और उससे मुतास्सिर होती हैं। यही तबदीली का राज़ है।

आज़ाद ख़याल औरतों का सुधार

सन् 1980 ई॰ के आख़िरी दिनों में फ़िल्मी दुनिया से जुड़ी हिरोइनों, कलाकारों की ज़ैनब के हाथ पर फ़िल्मी ज़िन्दगी और मौसीक़ी की दुनिया से वापसी और तौबा का सिलसिला शुरू हुआ। इस सिलसिले में इफ़राज हसरी और यासमीन ख़य्याम के नाम उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने अपनी फ़िक्र, सोच और सालेह ज़िन्दगी से फ़िल्मी दुनिया से जुड़ी दूसरी कलाकार औरतों को भी मुतास्सिर किया।

ज़ैनब ग़ज़ाली के दर्स की मजलिसों में पर्दा न करनेवाली औरतों और नौजवान लड़कियों की बड़ी तादाद हिस्सा लेती थी, लेकिन वे उनसे पर्दा के बारे में कोई बात नहीं करती थीं, लेकिन कुछ महीनों के अन्दर ही उनके दिल की दुनिया बदल जाती थी और वे अपने-आप हिजाब पहनना शुरू कर देती थीं। वे आज़ाद ख़याल, दीन से दूर, उदार और सेकुलर सोच की औरतों और छात्राओं से मुलाक़ात में बिलकुल हिचकिचाती नहीं थीं, बल्कि उनके दिल को मीठी बातों और नम्र व्यवहार से नर्म करने की कोशिश करतीं।

उन्होंने अल-जज़ायर के दावती सफ़र के दौरान वहाँ की औरतों की तंज़ीम की सद्र (जो बहुत ही आज़ाद और उदार ख़याल रखती थीं) से ख़ुद जाकर मुलाक़ात की और बहुत ही समझदारी और अक़्लमन्दी के साथ उनके यहाँ औरतों की बहुत बड़ी सभा आयोजित की, जिसमें उन्होंने औरतों को ऊपरी बनाव-सिंगार के बजाय दिल और दिमाग़ को क़ुरआन की आयतों से सजाने और सँवारने की दावत दी।

बदकार औरतों का सुधार

एक बार एक जज क़ाज़ी नबील ने ज़ैनब ग़ज़ाली के सामने एक अजीब मामला रखा और उसपर उनका ख़याल पूछा। जज ने बताया कि उनका भाई

डॉक्टर है और चर्म रोगों के अस्पताल में नौकरी करता है। अस्ल में यह अस्पताल नाजाइज़ जिंसी ताल्लुक़ात के नतीजे में पैदा होनेवाली बीमारियों के इलाज के लिए ख़ास है। (दूसरे विश्व-युद्ध के बाद मिस्र की पार्लियामेंट ने इस अस्पताल का रजिस्ट्रेशन रद्द कर दिया और उसे बन्द कर दिया) हौज़ नामक इस अस्पताल में अपनी आबरू बेचनेवाली, ज़िनाकारी में मुब्तला सैकड़ों तवाइफ़ औरतें दाख़िल हुआ करती हैं। अगर आप उन औरतों को नसीहत करें, आख़िरत की याद दिलाएँ, तौबा पर उभारें तो शायद बदलाव आए और अल्लाह उनको शरीअत पर अमल करने की ताक़त अता करे और दिल में ईमान पैदा हो जाए। जज ने कहा कि अस्पताल की मरीज़ औरतों को आपकी नसीहत की ज़्यादा ज़रूरत है।

ज़ैनब जज की बातों को सुनकर सोचने लगीं कि क्या किया जाए, उन्होंने इस मसले को तंज़ीम की परामर्श सभा में दूसरी मेम्बर औरतों के सामने रखा। सबने कहा कि यह काम तंज़ीम के लिए ठीक नहीं होगा। ऐसी मरीज़ औरतों से भलाई की कोई उम्मीद नहीं है। लेकिन ज़ैनब ग़ज़ाली ने एक इंक़िलाबी फ़ैसला किया और अकेले अल्लाह की दावत को पहुँचाने का फ़ैसला कर लिया। वे अस्पताल के डायरेक्टर के पास पहुँच गईं और मरीज़ औरतों के लिए दीन की हफ़्तावार नसीहत के लिए इजाज़त ले ली। फिर उन्होंने तौबा के विषय पर लगातार बहुत ही नरमी से नसीहत शुरू की। उनको आग के अज़ाब से डराया, दीन पर अमल न करने की वजह से होनेवाले आख़िरत के अज़ाब का नक़्शा खींचा, लेकिन यह भी बताया कि हर गुनहगार के लिए तौबा का दरवाज़ा हमेशा खुला हुआ है।

उनकी नसीहत के बाद बीमार औरतें अनगिनत सवाल करतीं, जैसे अब हम क्या करें? हमें घरवालों ने निकाल दिया है, अब हम कहाँ जाएँ? समाज हमें कैसे क़बूल करेगा? वह हमारी पिछली ज़िन्दगी को याद दिलाएगा। क्या पाकीज़ा ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए कोई हमारी मदद करेगा?

ज़ैनब ग़ज़ाली सभी सवालों का सुकून के साथ जवाब देतीं और उनको मुत्मइन करतीं, यहाँ तक कि अल्लाह की मेहरबानी से गुनाहों में लतपत नाफ़रमान औरतों ने अल्लाह की तरफ़ लौटना शुरू कर दिया। एक के बाद

एक ने तौबा करना शुरू किया और पिछले गुनाहों पर पछतावा और शर्म का इज़हार किया। फिर ज़ैनब ग़ज़ाली ने तौबा करनेवाली औरतों के शरीफ़ाना ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए इन्तिज़ाम और मदद का सिलसिला शुरू किया। लोगों को उनसे शादी पर उभारा।

जेल की कुछ झलकियाँ

ज़ैनब ग़ज़ाली, मिस्र के तानाशाह जमाल अब्दुन्नासिर के हुक्म पर दूसरे इख़वानी नेताओं के साथ जेल में डाल दी गईं, जहाँ 8 साल तक वहशी सज़ाओं में हण्टर, कोड़े, कुत्ते, आग और पानी के सिल, ज़बूह किए हुए जानवरों की तरह बल्लियों पर लटकाने, भद्दे शब्द और गंदी गालियों से दिल को चोट पहुँचाने, भूखा और प्यासा रखने, लम्बे समय तक इसतिंजा (शौचालय) न जाने देने, जाँच के नाम पर सुबह-शाम दफ़्तरों में क़िस्म-क़िस्म की तकलीफ़ देने, ख़तरनाक औज़ारों से पट्ठों को तकलीफ़ देने का लम्बा सिलसिला जारी रहा।

ज़ैनब खुद कहती हैं, मुझे जेल के 340 नम्बर कमरे में डाल दिया गया, जो क़ब्र की तरह तंग (संकरा) और तारीक और ख़ौफ़नाक सेल था। उसमें दो ख़ूँख़ार कुत्ते भी डाले गए। मैंने तयम्मुम करके नमाज़ शुरू कर दी। मुझे क़िब्ले का पता नहीं चल सका। मैं एक नमाज़ पूरी करती तो दूसरी शुरू कर देती, ताकि अल्लाह से ताल्लुक़ जुड़े और वह मुझे ज़ालिमों के ज़रिए से दी जानेवाली तकलीफ़ों से दूर रखे। कुत्ते रुकू और सजदे में मेरी पीठ नोच रहे थे और मेरे सिर और चेहरे को घायल कर रहे थे। मैंने अपनी आँखें बन्द कर लीं और मेरी ज़बान पर यह दुआ जारी रही, अल्लाह मेरे लिए काफ़ी है और बेहतरीन मददगार है। दोनों ख़ौफ़नाक कुत्ते लगातार मेरे शरीर को नोचते-खसोटते रहे।

जेलर बोला, हम तुझे मुर्ग़ी की तरह लटकाते हैं, पानी में डालते हैं, आग में फेंकते हैं, कुत्तों से नुचवाते हैं तो क्यों तेरा परवरदिगार और पालनहार तेरी मदद नहीं करता? मैंने जवाब दिया, हमारी कोड़ों से पिटाई करके और अलग-अलग तरीक़े की सज़ाएँ देकर क्या तुम लोग इस भ्रम में पड़ गए हो

कि हम पर भारी हो गए या तुम्हें ताक़त मिल गई है। हक़ीक़त यह है कि तुम सब हमसे डरे हुए हो। हम मुजरिम नहीं हैं, हमारे साथ तो सच्चाई का पैग़ाम है, अमानत का बोझ उठानेवाले, सच्चाई की तरफ़ बुलानेवाले और रौशनी की राह की निशानियाँ हैं। हम तुमपर भारी हैं, क्योंकि अल्लाह की हस्ती पर यक़ीन और भरोसा रखते हैं, उसी के रास्ते में जिहाद करते हैं। मगर एक बात ऐसी है जिससे हमारी हार साबित हो सकती है, अगर हम इस्लाम और तौहीद का झण्डा ऊँचा उठाने के लिए जिहाद की कोशिश छोड़ दें। हक़ीक़त यह है कि इस्लाम अन्दरूनी सियासत और बाहरी सियासत, और ऐसे अम्न और शान्ति का निज़ाम है जो सारी दुनिया को इनसाफ़ से भर देगा। क्योंकि वह बन्दों को इनसान की इबादत से छुटकारा दिलाकर सिर्फ़ एक अल्लाह की इबादत से सरफ़राज़ करता है। अपने मालिक की नाफ़रमानी के लिए बन्दों की फ़रमाबरदारी नहीं करनी चाहिए। बेशक, वह बन्दा जो अल्लाह ही के लिए सच्चाई और भरोसे के साथ मुसलमान हुआ वह अल्लाह का बन्दा बनकर कायनात में अल्लाह का हो गया। वह बन्दा अल्लाह की बनाई चीज़ों से क्या डरेगा, जिसकी रूह आसमानी दुनिया से जुड़ी हुई हो और जिसका दिल जन्नत में लगा हो, दुनिया उसके सामने छोटी हो जाती है, क्योंकि वह दुनिया की हक़ीक़त को जान चुका होता है। तुम क्या कर सकते हो? हमारे शरीर को चीर-फाड़ सकते हो, क़त्ल कर सकते हो, हमारा खाना-पानी रोक सकते हो, कोड़े तुम्हारे हाथों में हैं, दुख और तकलीफ़ देनेवाले हथियार तुम्हारे इशारे पर हैं, लेकिन इन सभी चीज़ों की हक़ीक़त हमारे लिए कुछ नहीं है, इसलिए कि हम अल्लाह की पार्टी के लोग हैं और तुम शैतान की पार्टी के हो। अल्लाह तआला का इरशाद (कथन) है—

> "वे लोग जो अल्लाह और उसके पैग़म्बर से जंग करते हैं वही लोग सबसे नीच हैं, अल्लाह ने फ़ैसला कर दिया है कि मैं और मेरे पैग़म्बर विजयी होकर रहेंगे, बेशक अल्लाह सबसे ताक़तवर और विजयी रहनेवाला है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-58 मुजादला, आयतें-20,21)

जेल में ज़ैनब ग़ज़ाली की आबरू पर हमला करने की कोशिश की गई।

इस मौक़े पर उनको अल्लाह की ग़ैब से मदद हासिल हुई। इस सम्बन्ध में वे कहती हैं, "सेल में एक मिस्र का फ़ौजी बुरी नीयत से धीरे-धीरे मेरी तरफ़ बढ़ने लगा तो मैंने पूरी ताक़त से चिल्लाकर कहा, 'ख़बरदार! एक क़दम भी आगे मत बढ़ना। अगर तूने क़रीब आने की कोशिश की तो मैं तुझे मार डालूँगी, मार डालूँगी, मार डालूँगी। समझे!' फ़ौजी सिकुड़ता-सिमटता मेरी तरफ़ बढ़ने लगा। मुझे केवल इतना याद है कि मेरे दोनों हाथों ने उसकी गरदन को दबोच लिया, फिर मैंने पूरी ताक़त से बिसमिल्लाह, अल्लाहु-अकबर कहते हुए अपने दाँत उसकी गरदन में पैवस्त कर दिए। अचानक वह मेरे हाथ से छूटकर गिर पड़ा। उसके मुँह से साबुन की झाग की तरह सफ़ेद झाग बह रहा था। वह मेरे पैरों के पास बिना हरकत के पड़ा था। उस पल अल्लाह ने मुझमें कमज़ोरी और लाचारी के बावजूद अजीब और हैरतनाक ताक़त पैदा कर दी थी। यह लड़ाई ज़बरदस्त थी, लेकिन जीत भलाई की ही रही। यह सच्चाई की निशानी और सच्चे दिलवालों के लिए ख़ुशख़बरी थी। सारी तारीफ़ अल्लाह के लिए है जो सारी दुनिया का पालनहार है। अल्लाह से बग़ावत करनेवाले ख़ौफ़ खाकर हार जाते हैं, जबकि पैग़म्बरों के वारिसों के पास सलाख़ों के पीछे केवल ईमान का हथियार होता है। मोमिन बन्दों के सच्चाई पर जमे रहने का ऐसा ही नतीजा होता है।"

जेल के एक फ़ौजी अफ़सर ने मुझ से कहा, "मैं इस ला-इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह का मतलब समझना चाहता हूँ जिसे तुमने अपना रखा है।" मैंने जवाब दिया, "नबी (सल्ल॰) पूरी दुनिया को बुतों और इनसानों की इबादत से एक ख़ुदा की इबादत की तरफ़ निकालने के लिए आए थे। यही ला-इला-ह इल्लल्लाह का मतलब है और मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहू का मतलब है कि आख़िरी नबी (सल्ल॰) जो वह्य लेकर आए यानी क़ुरआन और सुन्नत, अक़ीदे और अमल के अनुसार हमपर उसका लागू होना ज़रूरी है। इस कलिमे की यही सच्ची धारणा है।

मेरे हाथों को पैरों से बाँध दिया गया, और मुझे लटका दिया गया। कोड़े मेरे हाथ और पैरों पर बहुत बेरहमी के साथ पड़ना शुरू हुए। पिटाई और मार की रफ़्तार तेज़ होती गई, दर्द बढ़ता गया। जब दर्द सहना मुश्किल हो

गया और चुप रहने की ताक़त ख़त्म हो गई तो मेरी उस हस्ती से शिकायत की आवाज़ निकलने लगी जो खुले और छिपे सबका जाननेवाला है। मैं या अल्लाह! या अल्लाह! दुहराने लगी और कोड़े मेरे पैरों में दर्द बढ़ाते रहे। उस वक़्त मेरे दिल और दिमाग़ में सिर्फ़ अल्लाह ही अल्लाह था, यहाँ तक कि मैं बेहोश हो गई, मगर ज़ालिम का हाथ लगातार कोड़े लगाता रहा। उस वक़्त मेरा वजूद यही कह रहा था, "अल्लाह सबसे बड़ा है और सारी तारीफ़ उसी के लिए है। ऐ अल्लाह! सब्र और रज़ामन्दी के साथ हम तेरे उस इनाम पर शुक्र बजा लाते हैं जो तूने हमें इस्लाम, ईमान की नेमत की सूरत में दिया है।"

एक अन्धेरे कमरे का दरवाज़ा खुला। मुझे उसमें डालकर दरवाज़ा बन्द कर दिया गया। कमरे में क़दम रखते ही मैंने कहा, "बिसमिल्लाह, अस्सलामु अलैकुम" दरवाज़ा बन्द हो गया और बिजली के तेज़ बल्ब जला दिए गए। कमरा कुत्तों से भरा हुआ था। मुझे याद नहीं कि कुत्ते कितने थे। मैंने घबराहट में अपनी आँखें बन्द कर लीं और सीने पर हाथ रख लिए। मैंने कमरे के दरवाज़े पर ज़ंजीरें और ताले लगाने की आवाज़ सुनी और कुत्ते मेरे पूरे शरीर पर, सिर, हाथ, सीना, पीठ से चिमट गए। मुझे महसूस हुआ कि कुत्तों के दाँत मेरे शरीर के हर हिस्से में गड़ रहे हैं। मैंने सख़्त घबराहट में आँखें खोलीं, मगर ख़ौफ़नाक मंज़र देखकर फिर आँखें बन्द कर लीं। मैंने अपना हाथ अपने सिर के नीचे रख लिया और अल्लाह के नामों को दोहराने का काम या अल्लाह! से शुरू कर दिया। एक के बाद अल्लाह का दूसरा नाम मेरी ज़बान पर आता गया और उधर कुत्ते भी चिमटे रहे। मुझे उनके दाँत सिर पर, कन्धे पर, पीठ, सीने और पूरे शरीर पर गड़ते हुए महसूस होते। मैं अपने पालनहार को पुकारने लगी ऐ अल्लाह! सारी दुनिया से काटकर तू मुझे खुद से जोड़ ले। ऐ अल्लाह! तू मुझसे खुश हो जा, तू मुझे इस दिखाई देनेवाली दुनिया से हटा ले, इन सभी ग़ैरो से दूर करके मुझे खुद से क़रीब कर ले। तू मुझे अपने पास ठहरा, अपनी सकीनत (सम्पूर्ण शान्ति) से मुझे रंग दे और अपनी मुहब्बत की चादर मुझे उढ़ा दे। मुझे अपने रास्ते में प्यार, खुशी और शहादत अता कर और तौहीद के माननेवालों के क़दम जमा दे।

यह सब मैं धीरे-धीरे कह रही थी। उधर कुत्तों के नुकीले दाँत मेरे बदन में गड़ते हुए महसूस हो रहे थे। कई घण्टे गुज़र गए, फिर दरवाज़ा खुला और मैं कमरे से बाहर निकाली गई। मुझे यक़ीन था कि मेरे सफ़ेद कपड़े ख़ून से रंगीन होंगे, लेकिन हैरत! मेरे कपड़े उसी तरह साफ़-सुथरे थे जैसे कमरे के अन्दर जाते समय थे। मेरे शरीर पर कहीं कुत्तों ने एक दाँत भी नहीं मारा था। मेरा पालनहार कितना महान और काम बनानेवाला है। वह मेरे साथ है। ऐ अल्लाह! क्या मैं तेरी मेहरबानी और रहम की हक़दार हूँ? या इलाही तू ही तारीफ़ के लायक़ है। यह सब मैं चुपके-चुपके कह रही थी। जेल का जल्लाद मेरे कन्धे पकड़े हुए मुझसे पूछ रहा था, "तुझे कुत्तों ने नहीं काटा? क्यों? उसके हाथ में हण्टर था। पीछे एक दूसरा जल्लाद था। वह भी सोंटा लिए हुए था। शफ़क़ की लाली आसमान में गुम हो रही थी। सूरज डूब चुका था। मग़रिब की नमाज़ का वक़्त हो रहा था। मुझे तीन घण्टे से ज़्यादा वक़्त तक कुत्तों के साथ बन्द रखा गया था, भूखे और ख़ूँख़ार कुत्तों के साथ।

इख़वान का मिशन

औरतें अकसर ज़ैनब से सवाल करतीं कि इख़वान की दावत क्या है? वे बतातीं कि इस दावत और मिशन के कई हिस्से हैं—इसके पहले हिस्से का ताल्लुक़ समझ से है। यानी यह तसव्वुर कि इस्लाम एक मुकम्मल निज़ाम और मुकम्मल दीन है, जिसकी इमारत क़ुरआन और हदीस (सुन्नत) पर खड़ी होती है और सारे मुसलमान एक उम्मत हैं और इस उम्मत के सभी हिस्से भलाई और बनाव पर आधारित हैं। दीन के बुनियादी अक़ीदों के साथ अक़्ल, आज़ादी और जानकारी के मक़ाम की पहचान ज़रूरी है। इस मिशन का दूसरा हिस्सा 'सच्ची नीयत' है यानी जब तक दीन को बुलन्द करने के लिए दिल, हाथ, पैर और सच्ची नीयत के साथ कोई आदमी खड़ा नहीं होता और अमल नहीं करता उस समय तक कोई नतीजा नहीं निकल सकता। इस मिशन का तीसरा हिस्सा अमली जिद्दो-जुहद और तैयारी है, यानी एक मुस्लिम मर्द और मुस्लिम औरत को अपनी शख़सियत को किस तरह बनाना चाहिए, ख़ास तौर से अपने घर को किस तरह इस्लामी तौर-तरीक़े से सँवारना चाहिए। ज़ाहिर है कि इस पूरी जिद्दो-जुहद में रौशनी और रहनुमाई

क़ुरआन और सुन्नत से ही हासिल करनी होगी। इस मिशन का चौथा अहम हिस्सा जिहाद है, यानी सबसे पहले अपने-आपसे जिहाद करना, अपने-आपको अल्लाह और उसके आख़िरी पैग़म्बर के आदेशों का पाबन्द बनाना और उसे अल्लाह के आदेशों के सामने झुका देना, इसी तरह शैतान और उसकी चालों, वसवसों और बहकावे के ख़िलाफ़ जिहाद करना, अद्ल और इनसाफ़ को बढ़ावा देने और ज़ुल्मो-ज़्यादती को रोकने के लिए जिहाद करना।

इस मिशन का पाँचवाँ हिस्सा क़ुरबानी है, यानी अपनी सलाहियत, वक़्त, मालो-दौलत और ख़ाहिशात की क़ुरबानी देना, ताकि अल्लाह और उसके रसूल का लाया हुआ दीन पूरी तरह सबपर छा जाए और इस राह में आनेवाली सभी रुकावटें दूर हो जाएँ। इस मिशन का छठा हिस्सा इताअत और फ़रमाबरदारी है, यानी अल्लाह, रसूल और अमीर के आदेश का पालन करना। इस मिशन का सातवाँ हिस्सा अपने मिशन में क़दम जमाए रखना, मज़बूती और ठहराव है कि जिस फ़िक्रो-नज़रिए को अपनाया है उसकी माँगों को पूरा करने के लिए मज़बूती दिखाई जाए और आनेवाली परेशानियों पर सब्र किया जाए। इस मिशन का आठवाँ हिस्सा अपने वुजूद, अपनी सोच और अपनी पूरी ज़िन्दगी को इस्लाम के लिए ख़ास करना है, यानी अपने-आपको अल्लाह के रंग में रंग देना मक़सद होना चाहिए, जैसा कि अल्लाह तआला ने रास्ता दिखाया है–

> "इबराहीम के जीवन में तुम्हीरे लिए बेहतरीन नमूना है। और उन लोगों में भी जो उनके साथ है, जबकि उन्होंने अपनी क़ौम से कहा कि हम तुमसे बरी हैं और तुम जिन चीज़ों की अल्लाह को छोड़कर इबादत करते हो उससे भी हम बरी है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-60 मुम्तहिना, आयत-4)

इस मिशन का नवाँ हिस्सा आपसी भाईचारा और एक-दूसरे के साथ ताल्लुक़ात की मज़बूती है। इसका दसवाँ अहम हिस्सा भरोसा और यक़ीन है।

अगर इन हिस्सों या तत्वों को पूरी तरह मान लिया जाए तो इनसान

के अन्दर ख़ुशगवार और अच्छा बदलाव आता है और वह नेक इनसान बन जाता है, क्योंकि इस्लाम नेक इनसान बनाना चाहता है। इसलिए औरत को पहले अपने घर को इस्लामी बनाना होगा। अगर मिसाल और नमूने की तलाश हो तो मर्दों में अबू-बक्र सिद्दीक़ (रज़ि॰) जैसा, औरतों में ख़दीजा (रज़ि॰) जैसी, नौजवानों में हज़रत अली (रज़ि॰) जैसा, दौलतमन्दों में हज़रत उसमान ग़नी (रज़ि॰) और अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) जैसा, कमज़ोरों और ग़रीबों में हज़रत अम्मार-बिन-यासिर (रज़ि॰) और अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) जैसा इनसान हमारे लिए नमूना और मिसाल होना चाहिए। इन मिसालों पर अगर ग़ौर किया जाए तो यक़ीनन हमारे मन में यह बात आएगी कि क़ुरआन ऐसा इनसान ही बनाना चाहता है जिसमें रूहानियत की सिफ़त भी हो, उसकी सोच बड़ी हो, उसका काम तामीरी हो और वह दूसरों के लिए भलाई और क़ुरबानी का बेहतरीन नमूना हो।

बीमारी और कमज़ोरी

सन् 1990 की बीच दहाई में उन्होंने महसूस किया कि आँखों से पढ़ने और तिलावत करने में अब कुछ परेशानी हो रही है और आँख की रौशनी कम हो रही है। डॉक्टरों ने बताया कि आँख में सफ़ेद पानी आ गया है, जिसका ऑपरेशन करना होगा। ऑपरेशन तो हो गया, लेकिन उनको कई महीने तक उलझन रही। पता चला कि उनको बेहोशी की दवा ज़्यादा मिक़दार में दे दी गई थी, जिसका असर याद्दाश्त पर पड़ा है, नतीजे में उनको भूलने की बीमारी हो गई। इस हालत में उनको हफ़्तावार दर्स रोक देना पड़ा। लेकिन याद्दाश्त मुतास्सिर होने के बावजूद क़ुरआन की तिलावत में कभी उन्होंने ग़लती नहीं की।

जब याद्दाश्त और ज़्यादा मुतास्सिर हो गई तो उनकी बहन 'हयात' की बेटी आइशा (जो उनकी देखभाल के लिए तैनात थीं) ने लोगों को उनसे मिलने से मना कर दिया। यह अल्लाह का करम रहा कि उनको आम बीमारियाँ, जैसे ब्लड प्रेशर, शूगर और दिल आदि की कोई बीमारी नहीं हुई और आख़िरी दिनों तक वे अपनी निजी ज़रूरतें बिना किसी सहारे के ख़ुद

पूरी करती रहीं।

वे बड़ी नर्म दिल थीं। जब कोई परेशान, मुसीबत में पड़ी हुई औरत या यतीम बच्ची अपनी परेशानी बयान करती तो वे रो पड़तीं। यतीम बच्चों-बच्चियों के साथ वे बहुत शफ़क़त से पेश आतीं।

इन्तिक़ाल

मिस्र की इस महान इस्लामी मिशनरी और रहनुमा का इन्तिक़ाल 3 अगस्त 2005 ई॰ को क़ाहिरा में 88 साल की उम्र में हुआ और 4 अगस्त को मदीनतुन्नस्र की मस्जिद राबिआ में उनकी जनाज़े की नमाज़ अदा की गई।

ज़ैनब ग़ज़ाली ज़मीन पर इनसानों के बीच क़ुरआन के आदेशों को जारी और लागू करने के लिए बेचैन रहती थीं। यही फ़िक्र हर पल उनको बेचैन रखती थी। वे कहती थीं कि क़ुरआन की हिदायत अमर, सच्ची, आख़िरी और यक़ीनी है। इसलिए वही भरोसे के लायक़ और मुस्तनद है। उनका नारा था आओ क़ुरआन की तरफ़, पलटो क़ुरआन की तरफ़, देखो क़ुरआन की आयतों की तरफ़, ज़िन्दगी में तबदीली और उसकी तामीर क़ुरआन ही से मुमकिन है, अपने-आपको क़ुरआन के हवाले कर दो, और आसमान से लटकती हुई रस्सी को मज़बूती से थाम लो, कामयाबी ज़रूर मिलेगी। अपने दिल और दिमाग़ में क़ुरआन को बसा लो, उतार लो फिर देखो इसका नूर तुमको अपने घेरे में किस तरह लेता है।

—:—